बच्चे

पतरस बुख़ारी

यह तो आप जानते हैं कि बच्चों के कई प्रकार हैं। मसलन बिल्ली के बच्चे, फ़ाख़्ता के बच्चे वग़ैरह। मगर मेरा तात्पर्य सिर्फ़ इन्सान के बच्चों से है, जिनके प्रकट रूप से तो कई प्रकार हैं। कोई प्यारा बच्चा है और कोई नन्हा सा बच्चा है। कोई फूल-सा बच्चा है और कोई चाँद-सा बच्चा है। लेकिन ये सब उस समय तक की बातें हैं जब तक बरखुर्दार पालने में सोया पड़ा है। जहाँ जागने पर बच्चे की पाँचों इन्द्रियाँ काम करने लगीं, बच्चे ने इन सब उपाधियों से अनासक्त होकर एक अलार्म क्लॉक का रूप धारण कर लिया।

यह जो मैंने ऊपर लिखा है कि जागने पर बच्चे की पाँचों इन्द्रियाँ काम करने लगती हैं, यह मैंने अन्य विद्वानों के अनुभवों के आधार पर लिखा है, वरना मैं इस बात का हरगिज़ क़ायल नहीं।

कहते हैं बच्चा सुनता भी है और देखता भी है लेकिन मुझे आज तक सिवाय उसकी चीत्कार-शक्ति के और किसी शक्ति का सबूत नहीं मिला। कई दफ़ा ऐसा इत्तिफ़ाक़ हुआ है कि रोता हुआ बच्चा मेरे हवाले कर दिया गया है कि ज़रा इसे चुप कराना। मैंने जनाब, इस बच्चे के सामने गाने गाए हैं, शेर पढ़े हैं, नाच नाचे हैं, तालियाँ बजाई हैं, घुटनों के बल चलकर घोड़े की नक़लें उतारी हैं, भेड़-बकरी की सी आवाज़ें निकाली हैं, सिर के बल खड़े होकर हवा में बाईसिकल चलाने के नमूने पेश किए हैं, लेकिन क्या मजाल जो उस बच्चे की एकाग्रता में तनिक भी अंतर आया हो या जिस सुर पर उसने शुरू किया था उससे ज़रा भी नीचे उतरा हो और खुदा जाने ऐसा बच्चा देखता है और सुनता है तो किस समय?

बच्चे के जीवन का शायद ही कोई क्षण ऐसा बीतता हो जब उसके लिए किसी न किसी प्रकार का शोर आवश्यक न हो। अक्सर समय तो वे खुद ही अपनी मधुर तान से कानों में रस घोलते रहते हैं वरना यह दायित्व उनके प्रियजनों को निभाना पड़ता है। उनको सुलाना हो तो लोरी दीजिए, हँसाना हो तो अनर्गल से वाक्य, व्यर्थ-से-व्यर्थ मुँह बनाकर बुलंद-से-बुलंद आवाज़ में उनके सामने दुहराइए और कुछ न हो तो बेकारी में व्यस्त रहने के लिए उनके हाथ में एक झुनझुना दे दीजिए। यह झुनझुना भी कमबख़्त किसी निकम्मे की ऐसी ईजाद है कि क्या अर्ज़ करूँ! यानी ज़रा सा आप हिला दीजिए लुढ़का चला जाता है और जब तक दम-में-दम है उसमें से एक ऐसी बेसुरी, कान-छीलू आवाज़ अनवरत निकलती रहती है कि दुनिया में शायद उसकी मिसाल मुश्किल है और जो आपने "मामता या बापता" के जोश में आकर बरखुर्दार को एक अदद वह रबड़ की गुड़िया मंगवा दी जिसमें एक बहुत ही तेज़ आवाज़ की सीटी लगी होती है तो बस फिर खुदा-हाफ़िज़। इससे बढ़कर मेरी सेहत के लिए हानिकारक चीज़ दुनिया में और कोई नहीं। सिवाए शायद उस रबड़ के थैले के जिसके मुँह पर एक सीटीदार नाली लगी होती है और जिसमें मुँह से हवा भरी जाती है। खुशक़िस्मत हैं वे लोग जो माता-पिता कहलाते हैं। बदक़िस्मत हैं तो वे बेचारे जो नियति द्वारा इस ड्यूटी पर नियुक्त हुए हैं कि जब किसी प्रिय

रिश्तेदार या दोस्त के बच्चे को देखें तो ऐसे मौक़े पर उनकी निजी भावनाएँ कुछ ही क्यों न हों वे यह ज़रूर कहें कि क्या प्यारा बच्चा है।

मेरे साथ के घर एक मिर्ज़ा साहब रहते हैं। ख़ुदा की मेहरबानी से छह बच्चों के बाप हैं। बड़े बच्चे की उम्र नौ साल है। बहुत सज्जन आदमी हैं। उनके बच्चे भी बेचारे बहुत ही बेज़बान हैं। जब उनमें से एक रोता है तो बाक़ी के सब चुपके बैठे सुनते रहते हैं। जब वह रोते-रोते थक जाता है तो उनका दूसरा सुपुत्र शुरू हो जाता है। वह हार जाता है तो तीसरे की बारी आती है। रात की ड्यूटी वाले बच्चे अलग हैं। उनका सुर ज़रा बारीक है। आप उंगलियाँ चटख़वाकर, सिर की खाल में तेल तिसवाकर, कानों में रुई देकर, लिहाफ़ में सिर लपेटकर सोइए, एक पल के अंदर आपको जगाके उठाके बिठा न दें तो मेरा ज़िम्मा।

इन ही मिर्ज़ा साहब के घर पे जब मैं जाता हूँ तो एक-एक बच्चे को बुलाकर प्यार करता हूँ। अब आप ही बताइए मैं क्या करूँ। कई दफ़ा दिल में आया मिर्ज़ा साहिब से कहूँ हज़रत आपके इन राग-सुरों ने मेरी ज़िंदगी हराम कर दी है। न दिन को काम कर सकता हूँ न रात को सो सकता हूँ। लेकिन यह मैं कहने ही को होता हूँ कि उनका एक बच्चा कमरे में आ जाता है और मिर्ज़ा साहब एक वात्सल्यपूर्ण मुस्कान से कहते हैं, "अख़्तर बेटा! इनको सलाम करो, सलाम करो बेटा। इसका नाम अख़्तर है। साहब बड़ा अच्छा बेटा है। कभी ज़िद नहीं करता, कभी नहीं रोता, कभी माँ को तंग नहीं करता"। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि यह वही नालायक़ है जो रात को दो बजे गला फाड़-फाड़ के रोता है। माननीय मिर्ज़ा साहब तो शायद अपने ख़र्राटों के ज़ोर-शोर में कुछ नहीं सुनते। दुर्गति हमारी होती है, लेकिन कहता यही हूँ कि "यहाँ आओ बेटा," घुटने पर बिठाकर उसका मुँह भी चूमता हूँ।

ख़ुदा जाने आजकल के बच्चे किस क़िस्म के बच्चे हैं। हमें अच्छी तरह याद है कि हम बक़राईद को थोड़ा सा रो लिया करते थे और कभी-कभार कोई मेहमान आ निकला तो नमूने के तौर पर थोड़ी सी ज़िद करली, क्योंकि ऐसे मौक़े पर ज़िद उपयोगी हुआ करती थी। लेकिन यह कि चौबीस घंटे लगातार रोते रहें, ऐसा अभ्यास हमने कभी नहीं किया था।

***

अनुवादक : डॉ. आफ़ताब अहमद
व्याख्याता, हिंदी-उर्दू, कोलंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क